गुरु जम्भेश्वर के समतुल्य : पर्यावरण पोषक राजस्थानी संस्कृति और साहित्य

डॉ. प्रकाश अमरावत
विभागाध्यक्ष, राजस्थानी विभाग
राजकीय डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर

विश्नोई सम्प्रदाय के प्रवर्तक संत जाम्भोजी ने जिन 29 नियमों की बात कही उसको अनेक कवियों व साहित्यकारों ने अपने शब्दों में उकेरा। बीकानेर के अलमस्त कवि भीम पाण्डिया ने भी जाम्भोजी पर भजन और जम्भेश्वर चालिसा में इनका वर्णन किया है, जो मानवता और पर्यावरण के प्रेरक हैं।

सुभ गुणतीस धरम थपायो
प्रभु परमाणुं संख बजायो
हरि खेजड़ी हरियळ छावो
गाँव नगर इमरत बरसावो
सदा अमावस ने व्रत राखो
संध्या हवन सदा सत भाखो
अभख नसीला नारू मिलावै
पाणी दूध ईंधणी छाणौ
हाथो हाथ बणावो भाणो।

इस प्रकार मानवता की रक्षा, नम्रता, सहनशीलता और अच्छे कर्म करने की बात अपनी इन रचनाओं में की है। मनुष्य को अपने कर्तव्यों, दायित्वों का बोध कराया गया है। जड़–चेतन प्रकृति के प्रति मानवीय कर्तव्यों का बोध कराते संत जाम्भोजी के बताए गए ये नियम आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने उस समय थे। राजस्थानी फाक भी जाम्भोजी के उन्हीं नियमों–उपदेशों को सहेजे मानो प्रकृति की विनाश–लीला की पीड़ा तो कभी उसकी रक्षा का भार लिए मानव को सचेत करता रहा है।

राजस्थानी कवि लक्ष्मणदान कविया के शब्दों में –

रूप विनायक रूंख वर, रूंख सारदा रूप।
देवों रा इणमें दरस, भू छाजण बड़ भूप।।

अर्थात् ये वृक्ष सर्वसिद्धि दाता विनायक और वाणी का वर देने वाली माँ सरस्वती का रूप है। सभी देवताओं का वास वृक्षों में है और सबसे बड़ी बात यह है कि ये वृक्ष उदार और प्रतापी राजा के समान इस भूमण्डल के रक्षक हैं।

मानव और प्रकृति का अटूट सम्बन्ध आदिकाल से रहा है। मनुष्य ने जब आंख खोली तो वो प्रकृति की गोद में था। प्रकृति के नित नए रूपों में देखता उसके सुख को भोगता वो बड़ा हुआ, माटी में बचपन खेला, बसंत में यौवन ने अंगड़ाई ली, फिर एक दिन माटी में ही समा गया। वो प्रकृति से अभिन्न रहा जीवन पर्यन्त। यह कुदरत, यह प्रकृति पंचभूतों से मिलकर बनी है। मनुष्य की देह भी पंचभूतों से निर्मित है। आज बाजारवाद और वैश्वीकरण के दौर में मानव इतना स्वार्थी हो गया कि उसने कुदरत की रंगत ही बदल दी। हमारे लोक मानव में जहाँ तुलसीकृत मानव की चौपाइयां गूंजा करती है जिसके उत्तरकाण्ड में उल्लेख है कि 'मांगे वारिद देहि जल रामचन्द्र के राज' अर्थात् बादल भी वर्षा की जरूरत होने पर बरसते हैं और अरण्यकाण्ड में वर्णन आता है कि 'कामदगिरी में राजप्रसादा' राम को वनवास के समय कामदगिरी पर्वत पर इतने फल मिले कि खाद्य पदार्थों की कमी ही नहीं लगी, जैसे वो राज प्रसाद में रहते थे वैसे ही वहाँ रहते हैं। ये हमारी प्रकृति का रूप था जहाँ वनों से जीवों और वृक्षों की रक्षा होती।

आज अमृत वर्षा करने वाले बादल मानो आग बरसाते हैं। कहीं अतिवृष्टि तो कहीं अकाल की भीषण मार। धरती को हम धरतीमाता कहते हैं। सुबह उठते ही हमारे पूर्वज जिस धरणी को प्रणाम करते थे, अपना पांव नीचे रखने से पूर्व "पाद स्पर्श क्षमस्व मैं" कहकर क्षमा मांगते थे आज भी ऐसा देखा जाता है। उस धरती माता के सीने पर फैक्ट्रियां, कारखाने और बड़ी–बड़ी गगनचुम्बी इमारतें खड़ी कर दी गईं। कारखानों का धुआं हमारे चांद–सूरज की आभा ले उड़ा, हवाओं में जहर घुल गया, जंगल काट दिए गए, हरियाली के बिना पहाड़ गंजे

नजर आने लगे हैं, वर्षा का चक्र बदल गया। प्रकृति का असंतुलन ही पर्यावरण प्रदूषण का कारण बन गया। भारतीय संस्कृति तो अरण्य संस्कृति है। यहाँ वृक्षों की पूजा की जाती रही है। वृक्ष पर्यावरण का रक्षक है। हमारे यहाँ वट सावित्री व्रत, बड़ पूजा का प्रतीक है। वैसाख में पीपल सींचना, पीपल की पूजा करना, नीम में नारायण का वास बताना, तुलसी का विवाह करना, आमलका एकादशी को आंवले की पूजा करना, गुरुवार को केले की पूजा करना। चंदन, नागरबेल, दूब, फल, फूल के बिना देवी–देवताओं की पूजा अधूरी मानी जाती है। हमारे यहाँ "गांव–गाँव खेजड़ी नै गाँव–गाँव गो–गो" कहावत कही जाती है अर्थात् खेजड़ी के नीचे लोक देवी–देवताओं की पूजा का प्रचलन है। 'गणगौर' की पूजा फोग और दूब से की जाती है। यहाँ तक कि "आक अखेसरी बाप लखेसरी" जैसी कहावत से आक सींचा जाता है। ऐसी पर्यावरण रक्षक हमारी संस्कृति के संवाहक कवियों में प्रकृति के प्रति अटूट प्रेम और संवेदना के दर्शन होते हैं।

कवि चन्द्रसिंह बिरवाळी के शब्दों में

जीवणदाता बादळियां थांसूं जीवण पाय।
भल लूवां बाजो कित्ती मुरधर सहसी लाय।।

मरूधरा का वासी लूओं की लपटों को सहन करता है क्योंकि ये लू ही वर्षा में सहायक भी है।

लूओं की भीषणता में कवि ने जीव रक्षा की बात भी मार्मिक ढंग से की है हिरणी के माध्यम से कवि लूओं को कहता है –

"नारपणै सूं रै ईसकै, भल अंग भूंजो जाय।
मती लजाया मांपणौ, लेया लाल बचाय।।"

हे लूओं तुम स्त्री स्वभाव से ईर्ष्यावश हमें जलाओं पर स्त्री में माँ का विशेष गुण भी होता है अतः मातृत्व भाव से हमारे बच्चों (बाखोटियों) को बचा लेना उन्हें अपने तप से त्रस्त मत करना।

सांयाजी झूला कृत "नागदमण" में गो रक्षा और गायों से प्राप्त पंचामृत का गौधन की विशेषताओं का बहुत सुंदर वर्णन मिलता है। भारत गांवों का देश है और लोक देवी–देवताओं के 'ओरण', गौचर और आगोर जैसे स्थान हमारे पर्यावरण के पोषक हैं। जिनसे वक्षों और पशुधन विशेषकर गायों एवं वन्य जीवों की रक्षा होती है। अंत में फिर से 'रूंख सतसई' के कुछ दोहे रखना चाहूंगी –

मुगल न चाले मानखै, काम रूंख बिन कोय।
पग पग पर उपयोगिता, रूंखां हंदी होय।।
नावण पूजन नानियै, औरू दागण अंग।
जनम मरण रो जोग सैं, सजियो रूंखां संग।।

अर्थात् जन्म से मृत्युपर्यन्त मनुष्य का वृक्षों के साथ संयोग बना रहता है। वृक्षों के बिना हमारा काम नहीं चलता इसीलिए कविया जी ने बहुत अच्छी सीख हमें अपनी कृति के माध्यम से दी है कि –

धारो मिनखां हेत धर अपणो भलपण अेक।
बरसोदे ही बावणो, नामी दरखत नेम।
रूंख जिका नर रोपिया, लाभे सुरग जहीस।
जीव चराचर दे जगत उणने बड आसीस।।

अर्थात् प्रतिवर्ष अेक वृक्ष लगाने का नियम रखते हुए अपनी धरती के प्रति अपना प्रेम दर्शाओं, साथ में इस लोकधारणा को भी मजबूत किया कि जो वृक्षारोपण करेगा उसे लोक में जीवों का आशीर्वाद और परलोक में स्वर्ग का सुख मिलेगा। राजस्थानी का समृद्ध प्रकृति काव्य पर्यावरण संचेतना का वाहक बना है। जिस प्रकार गुरु जाम्भोजी के उपदेश।

पर्यावरण निरमळो राखण गहरो अरथ बतायो।
समराथल धोरै रो समरथ, जम्भेसर जस छायो।।

Volume-4, Issue-2 Quarterly (April 2023 to June 2023) ISSN- 2582-6824

laHkZ lwph%

1. श्रीरामचरितमानस तुलसीदास कृत
2. राजस्थानी रो दूहा साहित्य : शक्तिदान कविया
3. रूंख सतसई – लक्ष्मण दान कविया
4. लू – चन्द्रसिंह बिरकाली
5. श्री जंभेसर चाळीसो – भीम पाण्डिया रचित
6. जग में जंभेसर जस छायो – भीम पाण्डिया रचित
7. राजस्थानी व्रत कथावां – अर्जुनसिंह शेखावत